मुम्बई (भारत)
अगस्त ०७, २००१

सन्देश संख्या ३६

क्रियायोग से प्रशान्ति

ईश्वर के नाम का उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह तो अनाममय अस्तित्व है। जिसे नामांकित किया जा सकता है वह शाश्वत नाम नहीं है। जिसे पढ़ाया जा सकता हो वह शाश्वत सत्य नहीं है। जब व्यक्तिपरक सत्ता (अहंकेन्द्रित एवम् अवधारणाजनित व्यक्तित्व) अपने समस्त अनुभवों एवं मानसिक निवेशों से रहित (शून्य) हो जाती है तब सत्य अपनी अद्वितीयता के साथ स्वयं के लिए स्वयं के द्वारा निहायत व्यक्तिपरक रूप से अनुभूत होता है। सत्य अस्तित्व के तत्व की ओर ले जाता है। आवश्यकतानुसार भौतिक जगत के क्रियाकलापों के निष्पादन के लिए व्यक्ति को अपना कार्य सम्पादित करने देते हुए भी आत्म केन्द्रित गतिविधियों से मुक्ति निश्चित रूप से मानव शरीर में घटित होने वाली अद्भुत किन्तु वास्तविक घटना है।

नाम जपने से उस अनाममय अस्तित्व की कोई झलक नहीं मिल सकती है। यदि ऐसा हो सकता तो ईश्वर के नाम पर कोई रक्तपात, नरसंहार तथा संघर्ष न होते। नाम रहने से भगवत्ता के बहाने केवल विश्वासपद्धति एवं धर्मान्धता, कपटपूर्ण गणनाओं एवम् अनुबन्धित प्रतिक्रियाओं की कुरूपता ही उभरती है। शब्दाडम्बर ईश्वर के नाम पर मिथ्याभिमान और निहित स्वार्थ जनित अश्लीलता उत्पन्न करते हैं।

औपचारिक शिक्षा नहीं बल्कि अवधारणाविहीन जागृति की प्रक्रिया ही सर्वोत्तम शिक्षा है। इस प्रक्रिया में सत्य के प्रत्यक्षबोध के लिए इशारा मात्र पर्याप्त है। केवल परिकल्पित और उधारी ज्ञान ही अवधारित एवं संप्रेषित किए जा सकते हैं। साक्षी भाव तथा चित्तवृत्ति में रूपान्तरण सत्य का प्रत्यक्ष बोध है, शायद शरीर में एक सामंजस्यपूर्ण रासायनिक परिवर्तन भी है।

क्रियायोग के सद्गुरू अपने शिष्यों के गुरू ही नहीं उनके शिष्य भी होते हैं। जहाँ एक ओर वे अपने शिष्य को जगाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहते हैं, वहीं दूसरी ओर स्वयं जागृत होने के कारण शिष्य से सीखते रहते हैं। देवत्व का यही मार्ग है। सागर सैकड़ों जलधाराओं का स्वामी है, फिर भी, वह उनसे नीचे स्थित है। सागर वाष्पीकरण द्वारा स्वयं को आकाश (शून्यता) में उपलब्ध कराते हुए पुनः उन जलधाराओं को परिपूरित कर देता है।

जो विश्वास करता है, उसका विश्वास किया जायेगा।
जो संशय करता है, उन पर संशय किया जायेगा।
जो प्रदर्शन करता है, वह प्रबोधयुक्त नहीं है।
जो अपनी धर्म परायणता का दंभ रखता है, वह सम्मान नहीं पाता है।
जो आत्मश्लाघा करता है, वह कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाता है।
जो शेखी बघारता है, वह टिक नहीं पाता है।
आवश्यकता से अधिक भोजन और अनावश्यक सामान आनन्दमय अस्तित्व को विकृत कर देता है।
अनासक्त एवं शान्त रहें।
स्थिरत्व चित्तवृत्ति का नियंत्रक है।
अति, ज्यादती एवम् आत्मतोष से बचें।
अधिकार का दुरूपयोग न करें।
फल प्राप्त करें, किन्तु उसकी अपेक्षा न करें।
फल प्राप्त करें, किन्तु उसकी डींग न हाँकें।
फल प्राप्त करें, किन्तु अनुचित साधनों से नहीं।
मनुष्य स्वर्ग की कामना करता है।
स्वर्ग स्वाभाविक अवस्था का अनुगमन करता है।
स्वाभाविक अवस्था क्रियायोग का अनुगमन करती है।

क्रिया पोषण प्रदान करती है और परिपूर्णता लाती है। महान् प्रतिभायें विलम्ब से परिपक्व होती हैं। असुरक्षा के भाव से ग्रस्त मनुष्य सदैव पराश्रित बना रहना चाहता है। किन्तु एक सच्चा क्रियायोगी नित्यतृप्त तथा निराश्रयी के रूप में अपना परिचय देता है क्योंकि वह खोकर पाता है और पाकर खोता है।

शून्यता सर्वव्यापी है इसलिए सर्वत्र प्रवेश कर सकती है। जो जानता है कि कब रुकना है, कभी कठिनाइयों में नहीं पड़ता। शून्यता कभी निःशेष नहीं हो सकती। तृप्त व्यक्ति कभी निराश नहीं हेाता। प्रशान्ति सुव्यवस्था है।

ॐ प्रशान्ति ॐ